अन्तरराष्ट्रीय बौद्ध केन्द्र

सिद्धार्थ विश्वविद्यालय, कपिलवस्तु,
सिद्धार्थनगर–272202

सुशील कुमार तिवारी
आचार्य एवं विशेष कार्याधिकारी
अन्तरराष्ट्रीय बौद्ध केन्द्र

मो0नं0: 9140318839,
9415245707
ईमेलः **skt_gpu@yahoo.com**

पत्रांक : मेमो / अ0बौ0के0 / 12 / 2020 दिनांक 27.04.2020

अष्टावक्र – विश्राम का वेदान्त (1)

पिछले प्रबोधनों में बुद्ध की कतिपय देशना, जैन दर्शन एवं पतंजलि के योग दर्शन के माध्यम से यह रेखांकित करने का प्रयास किया गया कि वैश्विक समस्या– कोरोना का सामना हमें किस प्रकार करना चाहिए जिससे लॉकडाउन के कारण भौतिक घरों में रहने की विवशता से उत्पन्न किसी भी मानसिक पीड़ा से स्वयं को कैसे सुरक्षित रखें? इसी बिन्दु पर अष्टावक्र के चिन्तन के आलोक में भिन्न ढंग से विवेचना कुछ अगले प्रबोधनों में करने का प्रयास है।

अष्टावक्र भारतीय प्रज्ञा के ऐसे ज्वलंत तारे हैं जिनकी चकाचौंध को सहन कर पाना सरल नहीं है। यही कारण है कि दर्शन के इतिहास में सम्भवतः वे अकेले चिंतक हैं, जो उपेक्षित दिखते हैं क्योंकि जो हमें अनुकूल नहीं लगते उनकी हम उपेक्षा ही करते हैं, कारण विरोध करना भी वस्तुतः एक नकारात्मक समर्थन होता है। अष्टावक्र शरीर से तो अवश्य वक्र है लेकिन उनकी प्रज्ञा ऋजु है। जनक के दरबार में एक विशाल शास्त्रार्थ हो रहा था जिसमें जनक के निमंत्रण पर देश के सारे पण्डित, विद्वान एकत्र हुए थे। अष्टावक्र के पिता भी उस शास्त्रार्थ में गये थे। सूचना मिलने पर कि पिता हार रहे हैं, अष्टावक्र भी राजमहल चले गए। अष्टावक्र

सुशील कुमार तिवारी
आचार्य एवं विशेष कार्याधिकारी
अन्तरराष्ट्रीय बौद्ध केन्द्र

मो0नं0: 9140318839,
9415245707
ईमेलः **skt_gpu@yahoo.com**

का शरीर आठ जगहों पर टेढा था, पंडितों की वह सभा उनके हास्यास्पद ढंग से चलने पर हंस पड़ी और स्वयं अष्टावक्र भी खिलखिला कर हंस पड़े। इस पर जनक ने पूछा कि सब हंस रहे हैं, समझ में आता है लेकिन बेटे तुम क्यों हंस रहे हो?

अष्टावक्र ने छूटते ही कहा कि मैं इसलिए हंसने को विवश हूँ कि 'चमारों' की इस सभा में सत्य की विवेचना हो रही है। स्वभावतः उनके उत्तर से ब्राह्मणों की वह सभा निश्चित ही क्रोध से उन्मत हो गयी होगी, जिसके कारण जनक को हस्तक्षेप करते हुए अष्टावक्र से उनके कथन का अर्थ पूछा। अष्टावक्र ने सहजता से उत्तर देते हुए कहा कि चूँकि यहाँ उपस्थित सभी 'ब्राह्मणों' को मेरे शरीर की ही वक्रता दिखाई दी, 'मैं' नहीं दिखा अर्थात् उनकी दृष्टि की सीमा शरीर–चमड़ी थी इसलिए इन्हें 'चमार' ही कहना समीचीन है। अष्टावक्र ने कहा होगा कि कहीं भवन के टेढ़े होने से आकाश टेढा होता है? कहीं घड़े के फूटने से आकाश फूटता है? क्योंकि वह तो विकारों से परे होता है।

अष्टावक्र के उत्तर ने निश्चित ही जनक को झकझोर दिया होगा तभी उन्होंने अष्टावक्र से अपनी जिज्ञासा का समाधान चाहा होगा। अष्टावक्र के उपर्युक्त उत्तर में ही भारतीय प्रज्ञा के स्वरूप को समझने का सूत्र निहित है कि जीवन एवं जगत

सुशील कुमार तिवारी
आचार्य एवं विशेष कार्याधिकारी
अन्तरराष्ट्रीय बौद्ध केन्द्र

मो0नं0: 9140318839,
9415245707
ईमेलः **skt_gpu@yahoo.com**

के सम्बन्ध में दो ही दृष्टियाँ हो सकती हैं : एक आत्मपरक एवं दूसरी वस्तुपरक–आत्मदृष्टि या चर्मदृष्टि। चिंतन के लिए प्रयुक्त भारतीय शब्द–दर्शन, प्रथम दृष्टि का सूचक है जबकि इसके लिए प्रयुक्त पश्चिमी शब्द– फिलासफी द्वितीय दृष्टि का सूचक है। वास्तव में यह चिंतन के लिए प्रयुक्त होने वाले मात्र दो शब्द न हों, दो मूल प्रवृत्तियों के द्योतक हैं; जिसमें एक 'केन्द्र' पर बल देती जबकि दूसरी 'परिधि' पर। यूं तो केन्द्र एवं परिधि परस्पर सम्बद्ध है लेकिन इनमें से किसी एक को वरीयता देने पर पूरी स्थिति में गुणात्मक भिन्नता आ जाती है। परिधि है तो यह निश्चित है कि उसका केन्द्र होगा लेकिन यदि मात्र केन्द्र है तो कोई आवश्यक नहीं कि उसकी परिधि भी हो।

प्रथम दृष्टि में हम परिधि पर नहीं रूकते बल्कि उसकी विवेचना हेतु केन्द्र तक जाते हैं क्योंकि केन्द्र ही उसे निर्धारित करता है, दूसरे शब्दों में हम बाहर में ही उलझकर नहीं रह जाते बल्कि बाहर से अन्दर की यात्रा करते हुए उसे समझना चाहते हैं। दूसरी दृष्टि में हम अन्दर से बाहर जाने को विवश होते हैं क्योंकि परिधि के बिना केन्द्र हमारी समझ के बाहर होता है और परिधि–वस्तु शरीर में अटक जाते हैं और ब्राह्मणों की उपर्युक्त सभा के अनुसार व्यवहार करने लगते हैं।

सुशील कुमार तिवारी
आचार्य एवं विशेष कार्याधिकारी
अन्तरराष्ट्रीय बौद्ध केन्द्र

मो0नं0: 9140318839,
9415245707
ईमेलः **skt_gpu@yahoo.com**

जनक ने अष्टावक्र के उत्तर की गहराई को पकड़ा होगा तभी वे पूछने पर विवश होंगे, ''हे प्रभो, ज्ञान कैसे प्राप्त होता है और मुक्ति कैसे होगी और वैराग्य कैसे प्राप्त होगा? यह मुझे कहिए। मुझे समझाएँ।''

जनक के प्रश्न ऊपर से देखने में तीन अलग–अलग प्रश्न भले ही लगते हों लेकिन वे परस्पर सम्बद्ध हैं और सामान्य जन के लिए महत्वपूर्ण हैं। प्रश्न ज्ञान, मुक्ति और वैराग्य का है। अपने दैनन्दिन जीवन में भी हम इन शब्दों का प्रयोग करते ही रहते हैं। तो क्या उन्हीं अर्थों में जनक की जिज्ञासा/प्रश्न है? हम सभी को जनक के प्रश्न अटपटे, महत्वहीन साधारण लग सकते हैं। क्या वे वस्तुतः वैसे ही हैं?

सामान्यतः जिसे हम 'ज्ञान' की संज्ञा से अभिहित करते हैं वह ज्ञान न होकर मात्र सूचनाएँ या जानकारियाँ ही होती हैं। इतना तो जनक भी जानते रहे होंगे कि शास्त्रों में ज्ञान भरा पड़ा है। उन्हें हम कंठस्थ कर लें, *उनकी कितनी ही विवेचना क्यों न कर लें लेकिन इस सब से और सब कुछ भले ही सम्भव हो जाये लेकिन एक बात जो तमाम कोशिशों के बाद भी सम्भव नहीं होती, वह ज्ञान होता है। क्योंकि यदि वह ज्ञान होगा तो हमें मुक्त करेगा, स्वतन्त्र करेगा।* न कि बंधन में बांधेगा, परतंत्र करेगा। अपनी बात को मैं उदाहरण द्वारा स्पष्ट करना चाहूँगा। हम

अन्तरराष्ट्रीय बौद्ध केन्द्र

सिद्धार्थ विश्वविद्यालय, कपिलवस्तु,
सिद्धार्थनगर–272202

सुशील कुमार तिवारी
आचार्य एवं विशेष कार्याधिकारी
अन्तरराष्ट्रीय बौद्ध केन्द्र

मो0नं0: 9140318839,
9415245707
ईमेलः skt_gpu@yahoo.com

सभी जानते हैं कि तम्बाकू, गुटखा खाने एवं सिगरेट पीने से कैंसर होता है, लेकिन हमारा यह ज्ञान क्या हमें उनके सेवन करने से बचा पाता है? तम्बाकू, गुटखा खाने वालों को लाख समझाया जाय तो क्या वे खाना छोड़ देते हैं, कदापि नहीं। कारण क्या है?

स्पष्ट है कि उपर्युक्त जानकारी, ज्ञान हमारे अनुभव से निःसृत एवं पुष्ट नहीं है क्योंकि उनके सेवन से हमें तत्काल कोई खतरा अनुभूत नहीं होता है। इसलिए हम यह तर्क करते हैं कि लोगों को होता होगा, मुझे नहीं और यदि भविष्य में होगा तो देखा जायेगा। लेकिन इसी तर्क के आधार पर हम विषपान से बचते हैं, क्योंकि वहाँ असर तत्काल दिखाई देता है। हम प्रयोग के लिए भी विष चखने से बचते हैं। विष नहीं पीना चाहिए, इस हेतु ना तो धर्म ग्रन्थों में कोई उल्लेख मिलता और न ही सरकार इसके लिए वैधानिक प्रयास करती है। हमें स्पष्ट बोध रहता है कि हम इस बिन्दु पर कोई स्वतन्त्रता (liberty) नहीं ले सकते, यहाँ पर यह ज्ञान कि विष में मारक क्षमता है हमें विष से दूर रहने (मुक्त होने) में सहायक होता है।

चूँकि शास्त्र के वचन हमें मुक्त नहीं करते इसलिए जनक उन्हें 'ज्ञान' मानने के प्रति शंकालु हैं। शास्त्र में वर्णित ज्ञान हमें मुक्त करने के स्थान पर बाँधते ही दिखाई देते हैं। अनुभव में यही दिखाई देता है कि जो मात्र शास्त्र की बाते करते

सुशील कुमार तिवारी
आचार्य एवं विशेष कार्याधिकारी
अन्तरराष्ट्रीय बौद्ध केन्द्र

मो0नं0: 9140318839,
9415245707
ईमेलः **skt_gpu@yahoo.com**

रहते हैं वे हजारों बंधनों में दिखाई देते हैं। उनकी स्थिति ऐसे व्यक्ति के समान होती है जिसनें तैरने पर भले ही शोध उपाधि प्राप्त कर लिया है; जो तैरने की विधि पर घंटों भाषण दे सकता है लेकिन यदि उसे नदी में ढकेल दिया जाय तो डूबकर मर जायेगा। शास्त्रों के हमारे ज्ञाता कुछ इसी तरह के हैं। वे यह नहीं समझ पाते कि 'पानी' शब्द से हमारी प्यास नहीं बुझती क्योंकि उस हेतु हमें वास्तविक पानी की आवश्यकता होती है।

निश्चित है कि हमारे तथाकथित ज्ञानियों, पंडितों के पास ज्ञान न होकर, ज्ञानाभास होता है। उसी से वे मुक्त होने के स्थान पर सामान्यजन से भी अधिक बंधन में पड़े दिखाई देते हैं। वे लकीर के फकीर होते हैं, स्वतन्त्रता से न उठ सकते हैं, न बैठ सकते हैं और न जी सकते हैं। वे अपने अनुयायियों के अनुरूप अपने को ढ़ालने को विवश होते हैं। तथाकथित ज्ञानी अपने अनुयायियों के अनुयायी होते हैं, उनके गुलाम होते हैं। यह कैसा ज्ञान है जो हमें बंधन में डाल देता है। स्पष्ट है जिसे हम ज्ञान कहते हैं वह ज्ञान है ही नहीं। इसीलिए जनक का प्रश्न आज भी सामयिक है कि 'कथं ज्ञानम्?, कथं मुक्ति?'।

कोरोना के संबंध में प्रतिदिन नवीन जानकारी हमें प्राप्त हो रही है। वैज्ञानिकों के अनुसार यह विषाणु तेजी से स्वयं को परिवर्तित कर रहा है, इसलिए इसके

अन्तरराष्ट्रीय बौद्ध केन्द्र

सिद्धार्थ विश्वविद्यालय, कपिलवस्तु,
सिद्धार्थनगर–272202

सुशील कुमार तिवारी
आचार्य एवं विशेष कार्याधिकारी
अन्तरराष्ट्रीय बौद्ध केन्द्र

मो0नं0: 9140318839,
9415245707
ईमेलः **skt_gpu@yahoo.com**

व्यवहार के बारे में सुनिश्चित रुप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता है। वैज्ञानिकों की यह स्वीकारोक्ति से हमें भयभीत नहीं होना है बल्कि इससे हमें और भी सजग और सचेत होने की आवश्यकता है, क्योंकि हमारी स्वयं की सजगता ही इस समय हमें सुरक्षित रखने में सहयोग दे सकती है।

सुशील कुमार तिवारी
(विषेश कार्याधिकारी)
अन्तरराष्ट्रीय बौद्ध केन्द्र
सिद्धार्थ विश्वविद्यालय,
कपिलवस्तु,
सिद्धार्थनगर।